*भारत में पूंजी खाते का प्रबंधन : कुछ परिदृश्य **

या.वे. रेड्डी

इंडियन इकॉनॉमेट्रिक सोसायटी के इस वार्षिक सम्मेलन में उदघाटन भाषण देने हेतु निमंत्रण पर मैं सम्मानित महसूस कर रहा हूँ। यह खुशी की बात है कि इस क्षेत्र से जुड़े मित्रों से मुलाकात हो रही है, वह भी मेरे खुद के शहर हैदराबाद में। पर्चों में शामिल विषय-वस्तु के बारे में मुझे कुछ ज़्यादा नहीं कहना है। मेरा विचार है कि यदि मैं आपके सामने ऐसे विषय के कुछ परिदृश्य पेश करूं जिसे नीतिगत हलकों तथा अकादमी क्षेत्र में हाल में काफी महत्व दिया गया है, तो सहभागियों के लिए दिलचस्पी का विषय होगा, जैसे-भारत में पूंजी खाते का प्रबंधन।

I. पृष्ठभूमि

मुझे याद है कि जब मुझे जनवरी 2002 में चेन्नै में आपके वार्षिक सम्मेलन में व्याख्यान देने के लिए (भारत में मौद्रिक नीति के पैरामीटर विषय पर) आमंत्रित किया गया था, तो उस समय मैंने इस विषय का संक्षिप्त हवाला देते हुए कहा था कि - "जहां मौद्रिक नीति के दो उद्देश्य यथा - मूल्य-स्थिरता कायम रखना तथा अर्थव्यवस्था के उत्पादक क्षेत्र को पर्याप्त ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करवाना, जारी हैं, वहीं पूंजी प्रवाह और वित्तीय बाज़ार के उदारीकरण ने संस्थाओं में जोखिम की संभाव्यता को बढ़ा दिया है - इस प्रकार वित्तीय स्थिरता का मुद्दा प्रमुख बन गया है।"

आपको याद होगा कि हमने पूंजी के बड़े पैमाने पर प्रवाह तथा उसमें अत्यधिक उतार-चढ़ाव से मौद्रिक नीति के समक्ष चुनौतियों को नियंत्रित करने के लिए दो नवोन्मेषी उपाय किए हैं, अर्थात् चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) तथा बाज़ार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस), ताकि समष्टिगत-स्थायित्व, विशेषकर वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित की जा सके।

इंदिरा गांधी विकास अनुसंधान संस्थान की भारत विकास रिपोर्ट का विमोचन करते समय तथा 'भारतीय

* डॉ. या. वे. रेड्डी, गवर्नर, भा.रि.बैंक द्वारा 3 जनवरी, 2008 को इंडियन इकॉनॉमेट्रिक सोसायटी, हैदराबाद के वार्षिक सम्मेलन पर दिया गया उद्घाटन भाषण।

अर्थव्यवस्था-वर्तमान स्थिति और चुनिंदा मुद्दे' विषय पर बोलते हुए मैंने - "उन संभावित मुद्दों का उल्लेख किया था जिन पर पूंजी प्रवाह के ऋण से इतर घटकों का बेहतर प्रबंधन करने के लिए विचार किए जाने की आवश्यकता है और जो उभरती हुई चिंताओं का निराकरण करेंगे।"

मौजूदा हालात में, विश्व स्तर और घरेलू दोनों स्तर पर ऐसी अनेक विवश कर देने वाली परिस्थितियां हैं, जिनके लिए उन मुद्दों की चर्चा हम पहले कर चुके हैं, को पुनः देखने की तथा वर्तमान संदर्भ में उभरती चिंताओं की व्याख्या करने की जरूरत है।

II. विश्व संदर्भ

मैं सबसे पहले संक्षेप में विश्व संदर्भ पर प्रकाश डालना चाहूंगा। विश्व के वित्तीय बाज़ारों की गतिविधियों में अप्रत्याशित बदलाव हुए हैं। मुद्रा और ऋण बाज़ारों पर भारी दबाव है जिसे अनेक केंद्रीय बैंकों ने एकदिवसीय मुद्रा बाजार तथा मीयादी मुद्रा बाज़ार में चलनिधि डालकर समन्वित कार्रवाई के जरिए दुरूस्त करने का प्रयास किया है। केंद्रीय प्राधिकारियों ने हाल में जो कार्रवाई की है उसका वित्तीय बाज़ार के तत्काल भविष्य पर तथा वास्तविक अर्थव्यवस्था की दीर्घकालिक विकास दर एवं मूल्य स्थिरता पर क्या प्रभाव पड़ेगा और उनके क्या परिणाम होंगे यह अभी भी स्पष्ट नहीं है। इस दौरान, अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं के इक्विटी बाज़ार में अत्यधिक तेजी रही है, किंतु यह तेजी हाल की तेज़ी से कहीं अधिक और अधिक समय तक रही है। उभरती हुई बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के अनेक केंद्रीय बैंकों में यह चिंता व्याप्त है कि बाहरी सीमा से वर्तमान में असाधारण रूप से पूंजी प्रवाह की तेजी के कारण मौद्रिक प्रबंधन पर दबाव बढ़ गया हैं। ये चिंताएं अनेक महाद्वीपों तक फैली हुई हैं, भले ही उनकी अर्थव्यवस्थाओं का आकार कोई भी हो, उनमें चाहे जितना खुलापन हो, मौद्रिक व्यवस्था तथा विनिमय दर व्यवस्था चाहे जैसी हो। इन चिंताओं के प्रति की गई कार्रवाई जहां भिन्न-भिन्न हैं, वहीं उनमें सामान्य रूप से संयुक्त मौद्रिक नीति उपाय, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार के उपाय किए गए हैं, और प्रायः अनेक तरीकों से, कुछ मामलों में, प्रशासनिक कार्रवाई को अलग किए बिना पूंजी खाते का प्रबंधन किया गया है। कुछ देश, भारी मात्रा में पूंजी का प्रवाह आने से दबाव महसूस कर रहे हैं और उन्होंने विशेष रूप से अधिक से अधिक स्थिरीकरण निधि का उपयोग करते हुए चालू खाते के लिए प्रतिकारी नीतियों का सहारा लिया है।

हमारे वित्त मंत्री ने 7 दिसंबर 2007 को अर्धवार्षिक समीक्षा 2007-08 में "पूंजी प्रवाहों का प्रबंधन" के संदर्भ से यह कहा था कि :

"जहां अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इस संबंध में कुछ सफल एवं कुछ दुःखद समायोजन प्रक्रिया के अनुभव रहे हैं, वहीं विशिष्ट भारतीय संदर्भ में नवोन्मेषी नीति द्वारा कार्रवाई की आवश्यकता है। आगे चलकर, यह प्रमुख चुनौती होगी।" (पृ.57)

III. मुख्य धारा की अकादमिक सोच

पूंजी खाता के संबंध में व्यापक अकादमिक कार्य हुए हैं, किंतु सहजता के लिए मैं इस विषय पर हाल ही के व्यापक अध्ययन स्रोत की बात करूंगा जो अकादमिकों के बीच प्रत्यक्षतः नई सोच को प्रदर्शित करता है। प्रो. बैरी आइशेनग्रीन, जो यह स्वीकार करते हैं कि उन्होंने "सिक्के के दोनों रुख़" देखे हैं और जो इस विषय पर सम्माननीय प्राधिकारी माने जाते हैं, ने 01 अगस्त 2007 को सिंगापुर में "पूंजी का मुक्त आवागमन : एशिया के लिए इसके गर्भ में क्या है" विषय पर रेटिंग एजेंसी मलेशिया के सम्मेलन के लिए "पूंजी प्रवाह के लिए सावधानी पक्ष" विषय पर एक पेपर लिखा है। इस पेपर

में, उन्होंने पूंजी के मुक्त प्रवाह के संबंध में चार स्कूल के चिंतन का हवाला दिया है और हमारे लिए हिदायतपूर्ण है कि हम उनपर विस्तार से विचार करें।

पहला स्कूल खुले पूंजी खाता के पक्ष में है और पाठ्य पुस्तक के हवाले से पूंजी के और अधिक कुशल विनियोजन पर आधारित है। प्रो. आइशेनग्रीन इस व्याख्या पर संदेह प्रकट करते हुए तर्क देते हैं कि हाल के अनुभव यह नहीं बताते हैं कि पूंजी का प्रवाह विकसित देशों, जहां वह असीमित मात्रा में उपलब्ध है, से विकासशील देशों, जहां पूंजी की मात्रा अपर्याप्त है, की ओर है। वे कहते हैं कि :

"एक और समस्या यह है कि ईक्विटी बाज़ार के प्रवाहों को उदार बना देना, सभी पूंजीगत प्रवाहों को उदार बना देने जैसा नहीं है। अनुभव बताते हैं कि ईक्विटी में किए गए निवेश का ऋण में निवेश की तुलना में अधिक सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, किंतु सरकारें ऋण प्रवाहों को अधिक उदार बनाने के पक्ष में हैं।"

दूसरे स्कूल का तर्क है कि यदि पहले स्कूल की अपेक्षाएं पूरी नहीं होती हैं, तो भी इसके उपनिगमन (कोरोलरी) फायदे हैं क्योंकि विदेशी पूंजी के साथ प्रौद्योगिकी और संगठनात्मक जानकारी भी आती है। यह फायदा ईक्विटी तथा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के लिए सही हो सकता है, किंतु ऋण वित्त के मामले में सही नहीं है। प्रो. आइशनग्रीन आगे कहते हैं "सामान्यत: पूंजी खाता उदारीकरण से जुड़े लाभ क्या-क्या हो सकते हैं इसकी भिन्न-भिन्न व्याख्या हो सकती हैं ।" वे कहते हैं - "जो भी हो, इस बात के लिए चिंता करने के कारण हैं कि सुधार प्रक्रिया लागू करने की दृष्टि से अपनाया गया पूंजी खाता उदारीकरण महंगा भी पड़ सकता है और फायदेमंद भी।"

तीसरा स्कूल पूंजी खाता उदारीकरण को संकट के साथ जोड़ने पर जोर देता है और प्रो. आइशेनग्रीन लिखते हैं कि यह दृष्टिकोण "ऐसे अन्यथा विविध विचारों को एक करता है, जैसे जोसफ स्टिगलिज और जगदीश भगवती।" उन्होंने हाल की घटनाओं के आधार पर इस पहलू की दो प्रकार से व्याख्या की है अर्थात (क) पूंजी प्रवाहों के लिए विश्व सुरक्षित बनता जा रहा है, तथा (ख) अत्यधिक उछाल की स्थिति फिलहाल दबी हुई है, जो उभरते हुए बाज़ारों के लिए एक चेतावनी है। उनका विचार है कि हाल में जो उछाल आया है वह अमरीका में सब-प्राइम मार्गेज समस्या के कारण रहा है और इस संबंध में उक्त दोनों व्याख्याएं की जा सकती हैं, और वे अपनी बात इस प्रकार समाप्त करते हैं : "पूंजी खाता उदारीकरण को अन्य नीतियों के साथ उचित क्रम देना ही उसका महत्वपूर्ण आधार है" और इस संदर्भ में वे कहते हैं कि "पूंजी प्रवाह के खुलेपन से पहले व्यापार में खुलापन आने की जरूरत है" तथा सुदृढ़ और स्थिर मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों तथा खुले पूंजी बाज़ार के वातावरण के प्रति अधिक उपयुक्त लचीली विनिमय दर व्यवस्था" की आवश्यकता है।

चौथी विचार धारा के स्कूल इस बात का हवाला देते हैं कि एशियाई देशों को "पूंजी के अंतर्वाह को नियंत्रित करने की कठिनाई है और इसने उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता के लिए कितनी समस्याएं पैदा कर दी हैं।" अब तक इस दिशा में व्यापक रणनीतियां अपनाई गई हैं, जैसे- अंतर्वाह, उसके प्रभाव को सीमित करने, तथा उद्देश्यों आदि के लिए अपनाए गए उपाय इस संबंध में सबसे महत्वपूर्ण टिप्पणी राजकोषीय कार्रवाई की आवश्यकता के संबंध में है और वे कहते हैं :

"पुन:, संदेश यह है कि पूंजी खाते का खुलापन फायदेमंद तब होता है जब उसका अन्य नीतियों के साथ उपयुक्त तालमेल हो। और इसका आशय यह है कि जो देश इस प्रकार से राजकोषीय नीति का इस्तेमाल करने

में असमर्थ हैं, संभवतः राजनीतिक कारणों से, वे पूंजी खाते का उदारीकरण धीरे-धीरे करें।"

अंत में, प्रो. आइशेनग्रीन दो चुनौतियों का हवाला देते हैं, जिसका एशियाई प्राधिकारी, आगे चलकर, पूंजी प्रवाह से जुड़ी वर्तमान समस्याओं के संबंध में सामना करेंगे। पहली चुनौती का संबंध करेंसियों पर बढ़ते हुए दबाव से है क्योंकि क्षेत्र में निजी पूंजी का प्रवाह निरंतर जारी है। उन्होंने टिप्पणी की है :

"करेंसी की विनिमय-दर में वृद्धि की रोकथाम का मुख्य उपकरण राजकोषीय नीति होगा----, यदि सहज स्तर हेतु करेंसी अत्यधिक मज़बूत हो जाती है तो एशियाई सरकारों के लिए करों को बढ़ाने और सरकारी खर्चे कम करने की आवश्यकता होगी। यह राजनीतिक दृष्टि से चुनौतीपूर्ण है, किंतु यह पूंजी के मुक्त प्रवाह के लिए अनिवार्य शर्तें है।"

दूसरी चुनौती का संबंध अस्थिरता संबंधी जोखिमों को सीमित करना है। इसके बारे में वे कहते हैं :

"यदि एशियाई स्टॉक और बाण्ड बाज़ार में तेज़ गिरावट होती है तो इसका नकारात्मक आघात बड़ी तेज़ी से लीवरेज्ड निवेशकों से होकर संपत्ति क्षेत्र तक फैल सकता है, और अंततः उसका प्रभाव वास्तविक अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा।"

समापन में, पहली और दूसरी विचार धारा के स्कूल जिनका हाल के समय तक वर्चस्व बना रहा है, अब तीसरे और चौथे स्कूल की विचारधारा के अनुपूरक बन गए हैं, अथवा शायद इनका स्थान तीसरी और चौथी विचारधारावाले स्कूल ने ले लिया है। इतना ही नहीं, दूसरे स्कूल में अब न्यूनतम जोखिमों के संदर्भ में वे इक्विटी और ऋण प्रवाह के बीच के अंतर को मान्यता देने लगे हैं। तीसरा स्कूल पूंजी खाते का अन्य नीतियों के साथ उचित रूप से क्रमशः उदारीकरण करने के महत्व पर ज़ोर दे रहा है। चौथा स्कूल पूंजी खाते के प्रबंधन से संबंधित मुद्दों पर ज़ोर देता है और इसके प्रति और भी सूक्ष्म दृष्टिकोण अपनाता है। संक्षेप में, तीसरे और चौथे स्कूल जो अभी हाल में अस्तित्व में आए हैं, और जिन्हें सम्मान प्राप्त हो रहा है, के दृष्टिकोण भारत द्वारा अपनाए जा रहे दृष्टिकोण के काफी अनुरूप हैं।

IV. वर्तमान भारतीय संदर्भ

वित्त मंत्रालय ने वित्तीय वर्ष 2007-08 की दूसरी तिमाही के अंत में प्राप्तियों और व्यय की प्रवृत्तियों की 7 दिसंबर, 2007 को समीक्षा प्रस्तुत की है। इस दस्तावेज़ में, समष्टिगत आर्थिक परिदृश्य से संबंधित अनेक सामयिक मुद्दों का विस्तृत विश्लेषण किया गया है। इस चर्चा में पूंजी खाते के प्रबंधन से संबंधित स्थिति और मुद्दों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है और मौद्रिक प्रबंधन की चुनौतियों तथा पूंजी प्रवाहों के प्रबंधन में जटिलताओं के बारे में निम्नलिखित पैराग्राफों में लिखा है कि :

"चालू वर्ष के दौरान मौद्रिक प्राधिकारियों के समक्ष सबसे प्रबल मुद्दा विदेशी मुद्रा का लगातार बढ़ता प्रवाह तथा उसके प्रति नीतिगत कार्रवाई रही है।" [पैरा 3.1.12(पृ.37)]

"पूंजी प्रवाह का प्रबंधन एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें बहुत से नीतिगत विकल्प होते हैं, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ शामिल है : चलनिधि प्रबंधन तथा ब्याज दर से संबंधित मौद्रिक नीति के उद्देश्य और वित्तीय स्थिरता सहित वित्तीय बाज़ार की स्वस्थ स्थिति बनाए रखना।" [पैरा 3.1 (पृ.56)]

"राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा 19 दिसंबर, 2007 को अनुमोदित 11 वीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) में इस संबंध में अनेक टिप्पणियां की गई हैं। उनमें से कुछ यहां प्रस्तुत की जा रही हैं :

"भारी मात्रा में अंतर्वाह को नियंत्रित करने में जो समस्याएं पैदा हुई हैं उन पर अध्याय-10 में चर्चा की गई है।" ये समस्याएं 'तीन प्रकार के संकट' से पैदा होती हैं जो सर्वविदित हैं, और होता यह है कि तीन उद्देश्यों अर्थात् पूंजी का मुक्त आवागमन, स्वतंत्र मौद्रिक नीति तथा स्थिर विनिमय दर को एक-साथ प्राप्त करना संभव नहीं होता। उन उपायों पर ध्यान दिया जाना चाहिए जिससे पूंजी के प्रवाह पर लगाम लगाई जा सके और अर्थव्यवस्था की खपाने की क्षमता बढ़े ताकि प्राचीन "डच बीमारी" की स्थिति में जाने से बचा जा सके जहां व्यापार न की जाने वाली मदों की कीमतें जरूरत से ज़्यादा बढ़ जाती हैं और कारोबारी क्षेत्र में अर्थव्यवस्था की प्रतिस्पर्धा शक्ति को चौपट कर देती हैं। " (पैरा 2.30)

"अतः नीतिगत उपाय के रूप में पूंजी खाते को खोलने हेतु सावधानीपूर्वक अपनाए गए दृष्टिकोण ने काफी हद तक सरकार को आने वाले कतिपय श्रेणियों के प्रवाह को सीमित करने की छूट दे दी है।" (पैरा 2.33)

"इन समस्याओं से सरकार द्वारा पूंजी अंतर्वाहों को उदार बनाने के मामले में अपनाए गए सतर्क दृष्टिकोण की खासियत का पता चलता है। विकास प्रक्रिया को वित्त प्रदान करने हेतु पूंजी के संचय के इस्तेमाल का जो फायदा है उसे पूंजी खाते की पूरी तरह से परिवर्तनीयता की ओर धीरे-धीरे बढ़ने की वचनबद्धता में माना गया है। किंतु यह परिवर्तनीयता धीरे-धीरे ही होनी चाहिए ताकि प्राधिकारी इससे होने वाले अप्रत्याशित उछाल से निपट सकें। पूंजी प्रवाहों के नियंत्रण में विभिन्न प्रकार के प्रवाहों के तुलनात्मक आकर्षण को पहचानना जरूरी है। इस संबंध में सबसे अधिक पसंद किया जाने वाला प्रवाह प्रत्यक्ष विदेशी निवेश है। स्टॉक बाजार के माध्यम से भारतीय फर्मों में तथा जोखिम पूंजी निधि द्वारा गैर-सूचीबद्ध कंपनियों में निवेश कारना भी काफी फायदेमंद है। बाह्य वाणिज्यिक उधार तथा अन्य अल्पकालिक प्रवाह ऐसे क्षेत्र हैं जहां कोई अचानक उछाल की स्थिति को सहज बनाने के लिए नियंत्रण लागू कर सकता है। किंतु, यहां तक कि पूंजी नियंत्रण तरीकों से भी, यदि आने वाला पूंजी प्रवाह तीव्र हो जाता है तो उसे व्यवस्थित करना आसान नहीं होता है। ऐसी स्थिति में, यह आवश्यक है कि विदेशी मुद्रा भंडार में भारी वृद्धि के असर को बेअसर करने के लिए राजकोषीय लागत को सीमित करने के रास्ते तलाश किए जाएं : या तो इन प्रवाहों को कम आकर्षक बनाया जाए अथवा ऐसे उपायों से जिसमें उसके प्रभाव को बेअसर करना महंगा न हो।" (पैरा 13.72)

यह उल्लेखनीय है कि हाल में विश्व बाज़ार में हुई उथल-पुथल के कारण अधिक महत्व तत्काल उत्पन्न चुनौतियों को दिया जा रहा है, जिसमें यह ज़रूरी है कि देश में विकास की प्रक्रिया और स्थिरता से संबंधित घरेलू कारकों पर अधिक ध्यान दिया जाए। प्रधानमंत्री ने 19 दिसंबर 2007 को आयोजित राष्ट्रीय विकास परिषद की 54वीं बैठक में अपने शुरुआती संबोधन में अन्य बातों के साथ-साथ कहा था कि :

" सब-प्राइम उधार संकट के कारण विश्व के वित्तीय बाज़ार पर कुछ बादल छा गए हैं। इस बात की चिंता है कि अमरीका तथा अन्य अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं का विकास धीमा पड़ जाएगा और यहां तक कि कुछ में मंदी आ सकती है। इससे हमारे निर्यात तथा पूंजी प्रवाह दोनों पर प्रभाव पड़ेगा। हमारी अर्थव्यवस्था अब काफी हद तक विश्व अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ गई है, तथा बाह्य क्षेत्र का जीडीपी में हिस्सा लगभग 40 प्रतिशत हो गया है, इसलिए हम अंतरराष्ट्रीय गतिविधियों से पूरी तरह अछूते नहीं रह सकते। इसका यह मतलब नहीं है कि निराशावादी हो जाएं और अपने विकास लक्ष्य के प्रति महत्वाकांक्षा कम कर दें। इसका तात्पर्य सिर्फ इतना है कि हम अपने विकास के घरेलू संचालकों को बनाए रखने के लिए अपने प्रयासों को दोगुना कर दें और यह सुनिश्चित करें कि हमारी नीति से विकास की दर और भी तेज़ हो।"

सारांशत:, भारत की लोक नीति में निम्नलिखित शामिल है :

क) विकास और स्थिरता दोनों के लिए पूंजी खाते का उपयुक्त प्रबंधन महत्वपूर्ण है;

ख) पूंजी खाते के प्रति हमारे सतर्क दृष्टिकोण ने हमें राहत प्रदान की है;

ग) विभिन्न प्रकार के पूंजी प्रवाहों के संबंध में अलग-अलग बरीयताएं हैं;

घ) कुछ राजकोषीय खर्चे सावधानीपूर्वक किए जा रहे हैं क्योंकि प्रभावों को बेअसर करने के लिए ये ज़रूरी हैं;

ङ) मौद्रिक और विनिमय दर प्रबंधन, सर्वविदित तीन प्रकार के असमंजसं के संदर्भ में तथा विश्व के वर्तमान जटिल वातावरण में अत्यंत कठिन कार्य है। भारत विश्व की घटनाओं से अछूता नहीं रह सकता किंतु हमें विकास के घरेलू संचालकों को बनाए रखना है।

V. नीतिगत परिदृश्य

यह सही है कि पूंजी खाते की प्रबंधन-प्रक्रिया में अनेक दुविधाएं, ट्रेड-आफ तथा निर्णय लेने संबंधी अनेक कठिनाइयां हैं। विश्व स्तर पर अनिश्चितताओं के माहौल में पूंजी प्रवाहों में बड़े पैमाने पर उछाल के कारण बढ़ते हुए दबाव ने इस कार्य को और भी जटिल एवं गंभीर बना दिया है। मैं इस संबंध में, विशेष रूप से विश्लेषणात्मक दृष्टि से संभावित दृष्टिकोणों का सारांश प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

पहला, यह देखने की जरूरत है, हालांकि यह कठिन कार्य है, कि पूंजी के प्रवाह का स्वरूप स्थायी प्रकार का है अथवा अस्थायी प्रकार का। विवेकपूर्ण बात यह है कि, प्रारंभिक कार्रवाई के रूप में, भारी मात्रा में आने वाले पूंजी प्रवाहों को अस्थायी माना जाए, और यदि इन प्रवाहों से विदेशी मुद्रा बाज़ार में अत्यधिक उछाल पैदा होता है तो थोड़ा-बहुत हस्तक्षेप आवश्यक है। यह अंदाज़ा लगाना कि पूंजी प्रवाह में अत्यधिक उछाल है, केवल इस पर निर्भर नहीं करता कि प्रवाह की मात्रा कितनी है, बल्कि कुछ हद तक इस बात पर भी निर्भर करता है कि पूंजी प्रवाहों के कंपोनेंट्स (घटकों) की गुणवत्ता कैसी है। जहां संभावनाशील निर्गमों में ईक्विटी, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के कारण प्रवाह होता है, उसे अधिक स्थायी स्वरूप का माना जा सकता है, जबकि नियंत्रण के अधीन खरीद के चैनलों से होने वाले प्रवाह जो केवल तकनीकी रूप से विदेशी प्रत्यक्ष निवेश होते हैं, उनमें स्थायित्व नहीं होता है। समग्र रूप से, संविभाग निवेश, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की तुलना में कम स्थायी होता है। इस संबंध में बाज़ार सहभागियों की राय जानना भी महत्वपूर्ण है कि उनकी दृष्टि में अत्यधिक उछाल का आशय क्या है।

दूसरा, बड़ी और एकमुश्त मात्रा, प्रत्याशित होने पर भी, बाज़ार में गड़बड़ी पैदा कर देती है, ऐसी स्थिति में, बाज़ार की प्रत्याशाओं को उपयुक्त रूप से नियंत्रित करते हुए नीतिगत हस्तक्षेप, वक्तव्यों के माध्यम से एकमुश्त प्रवाह के प्रभाव को समाप्त किए जाने की आवश्यकता है।

तीसरा, हस्तक्षेप का उद्देश्य विदेशी मुद्रा बाज़ार में उतार-चढ़ाव की स्थिति को नियंत्रित रखना है, एक लंबे समय तक हस्तक्षेप करना, वह भी ऐसी स्थिति में जब विनिमय दर किसी एक दिशा में बढ़ रही हो, हस्तक्षेप के प्रभाव को कम कर सकता है। किंतु, महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि यदि कोई हस्तक्षेप न किया जाए तो विदेशी मुद्रा बाज़ार में भावी उतार-चढ़ाव की प्रत्याशाओं पर क्या प्रभाव पड़ेगा। हस्तक्षेप करने की चुनौती और प्रत्याशाओं का प्रबंधन खास तौर से और भी भयभीत करने वाला होगा जब वित्तीय संक्रामकता फैलती है,

क्योंकि ये घटनाएं अचानक होती हैं, उनकी गति बहुत तेज़ होती है और अप्रत्याशित प्रवाहों की मात्रा बहुत बढ़ जाती है और किसी एक दिशा में होती है। प्रासंगिक मौद्रिक नीति का सारतत्व यह है कि नीतिगत उपायों के समायोजन की गति तेज़ी से बदलती परिस्थितियों के अनुसार हो।

चौथा, इससे जुड़ा हुआ एक मुद्दा यह भी है कि क्या स्थितियों को बेअसर करने वाला हस्तक्षेप अपनाया जाय, और यदि हां, तो यह जरूरी है कि हस्तक्षेप किस समय किया जाए और कितनी मात्रा में किया जाए। आम तौर पर निष्प्रभावी करने वाली क्रियाओं में लागत लगती है। वहीं पर यह भी ज़रूरी है कि पूंजी खाते में प्रवाहों की वजह से 'डच रोग' के संकेत मिलने पर उसे बेअसर न किए जाने से उसकी अप्रत्यक्ष लागत क्या होगी। प्रायः, सवाल यह नहीं होता है कि उसे बेअसर किया जाए या नहीं, बल्कि सवाल यह होता है कि उसे कितना बेअसर किया जाए। यही निर्णय लेना ही महत्वपूर्ण मुद्दा है, और इसके लिए घरेलू मौद्रिक तथा चलनिधि स्थितियों दोनों को देखते हुए निर्णय लेने की आवश्यकता है।

पांचवा मुद्दा, यह है कि प्रभाव को बेअसर करने के लिए किन उपकरणों का चयन किया जाए और उन्हें किस उपयुक्त अनुपात में रखा जाए, अर्थात बाज़ार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस), चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) तथा प्रारक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) की अलग-अलग विशेषताएं हैं और उनकी परस्पर क्रियाएं भी भिन्न हैं। इनमें से प्रत्येक का इस्तेमाल इस पर निर्भर करेगा कि प्रवाहों के कंपोनेंटों (घटकों) का स्थायित्व क्या है और कुल मिलाकर उन्हें किस प्रकार बेअसर किया जाए। इसके अलावा, प्रत्येक उपकरण को कई प्रकार से इस्तेमाल किया जा सकता है। एलएएफ अत्यधिक छोटी अवधि के प्रवाहों का नियंत्रण कर सकती है। एमएसएस लंबे समय के, एलएएफ से थोड़ा बेहतर नियंत्रण कर सकती है, तथा सीआरआर काफी लंबी अवधि के प्रवाहों को दुरुस्त करने का सबसे उपयुक्त तरीका है किंतु, एमएसए का प्रभावी होना, रिज़र्व बैंक के निर्णय से अधिक बाज़ार सहभागियों की पहल पर निर्भर करता है। परिचालन की दृष्टि से, मुद्दा यह नहीं होता कि 'कौन' सा उपकरण उपयोग किया जाए बल्कि मुद्दा यह है कि पूंजी प्रवाह, बाज़ार स्थिति तथा मौद्रिक एवं ऋण गतिविधियों को ध्यान में रखकर प्रत्येक उपकरण का 'कितना' उपयोग किया जाए।

छठा, विनिमय दर के उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करने के लिए बाज़ार में हस्तक्षेप करना और फलस्वरूप निष्प्रभावी करने वाली कार्रवाई, पूंजी खाते के प्रभावी प्रबंधन के उपयों से यथावश्यक समर्थित होनी चाहिए। जिस प्रकार से स्थिरीकरण निधि, चालू खाते के आघातों को दूर करती है, उसी प्रकार से पूंजी खाते का प्रबंधन तथा बाज़ार में हस्तक्षेप करना पूंजी खाते के आघातों को दूर करने के लिए न्यायसंगत है।

सातवां, वित्तीय बाज़ार के विकास पर निरंतर ध्यान देने से पूंजी प्रवाह की मध्यावधि चुनौतियों को कम किया जा सकता है। किंतु इस बात का ध्यान रखना ज़रूरी है कि वित्तीय बाज़ार को परिपक्व होने में समय लगता है। इसलिए, वित्तीय बाज़ार के विकास के लिए निरंतर कार्य करते हुए पूंजी प्रवाहों को अल्प अवधि में नियंत्रित करने हेतु अन्य उपकरणों का इस्तेमाल किया जाए। हमारी वरीयता 'क्रमिक' दृष्टिकोण की रही है जिसकी ऐसे समय पर परख की गई है और जो सफल भी सिद्ध हुई है। संक्षेप में, मुद्दा न तो वित्तीय बाज़ार के विकास का है और न ही पूंजी खाते के प्रबंधन का, बल्कि मुद्दा यह है कि विद्यमान परिस्थितियों में प्रत्येक दृष्टिकोण का कितना और कितने समय तक उपयोग किया जाए।

आठवां, अर्थव्यवस्था की सहन-क्षमता में वृद्धि भी उक्त प्रभाव को कम करने का एक अन्य कारक है। किसी

अर्थव्यवस्था में कम समय में सहन-क्षमता पैदा करना आसान नहीं है और किसी भी स्थिति में यह अत्यंत कठिन कार्य है कि अर्थव्यवस्था की सहन-क्षमता को, अस्थिर पूंजी प्रवाह के अनुरूप बना दिया जाए। इसके अलावा, चालू खाता घाटे का स्तर, जिसके बारे में यह माना जाता है कि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में इसे सामान्यतया विश्व वित्तीय बाज़ारों द्वारा संभाल लिया जाता है, वही इस समय आने वाली पूंजी की प्रचुर राशि से कम है। अतः, सहन-क्षमता को बढ़ाना उपयुक्त कदम होगा, किंतु केवल नियंत्रित कर लेने की सीमा तक ही और जो सामान्य परिस्थितियों में मध्य अवधि में प्राप्त कर ली जाए।

अंतिम, कभी-कभी यह सुझाव दिया जाता है कि आने वाले बढ़ते प्रवाहों को नियंत्रित करने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि बाहर जाने वाले प्रवाहों को प्रोत्साहित किया जाए। बाहर जाने वाले प्रवाहों को उदार बनाना अल्प समय में अधिक सहायक नहीं होगा क्योंकि अधिक उदारीकृत व्यवस्था और भी अधिक प्रवाहों को आने में आकर्षित करेगी। अतः, जहां कार्रवाई स्वरूप बाहर जाने वाले प्रवाहों को थोड़ा उदार बनाया जाए जेसे - हमारे कार्पोरेट द्वारा वास्तविक क्षेत्र में विदेशी निवेश को उदार बनाना सहायक होगा, वहीं प्रवाहों को उनकी तीव्रता के आधार पर नियंत्रित करने के अन्य उपायों का भी साथ में उपयोग करना होगा।

VI. व्यावहारिक दृष्टिकोण

बाह्य क्षेत्र प्रबंधन के नीतिगत परिदृश्य की व्याख्या से यह सिद्ध हो जाता है कि यह अनिवार्य रूप से एक व्यावहारिक, इंटरएक्टिव तथा विकासशील है। मैं संक्षेप में कुछ ऐसे कारणों का वर्णन करना चाहूंगा जो यूं तो बहुत ही व्यावहारिक लगेंगे किंतु वे बाह्य क्षेत्र की प्रबंधन नीति में बहुत कम स्पष्टता से परिभाषित किए गए हैं।

पहला, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाज़ार, उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं जैसे - भारत को पूर्णरूपेण बाज़ार अर्थव्यवस्था नहीं मानते हैं, वे इसे केवल ऐसी अर्थव्यवस्था मानते हैं जो बाज़ारीकरण की प्रक्रिया में है। अतः वित्तीय बाज़ारों की प्रतिक्रिया एक ही प्रकार के समष्टिगत आर्थिक अथवा राजनीतिक विकास के प्रति अलग-अलग होती है जो इस बात पर निर्भर करती है कि वह उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्था है या फिर विकसित अर्थव्यवस्था। इसलिए, उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं को अधिक व्यावहारिक एवं प्रासंगिक नीति अपनानी चाहिए।

दूसरा, बाज़ारों में स्वतः नियंत्रित करने वाली प्रणाली, खास तौर से वित्तीय बाज़ारों में, पूंजी नियंत्रण प्रणाली की अनुपस्थिति में सहज रूप में कार्य करती है। किंतु ऐसी प्रणालियां विकसित अर्थव्यवस्थाओं में अधिक कुशलता से कार्य करती हैं जबकि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में उनकी कुशलता बहुत ही कम होती है। उपयुक्त स्वतः नियंत्रण प्रणाली सहित वित्तीय क्षेत्र का विकास करना फायदेमंद होगा, किंतु अल्पकाल में इसे प्राप्त करना संभव नहीं है, और विशेष रूप से विश्व की अत्यधिक अनिश्चित आर्थिक स्थितियों में इसे प्राप्त करना तो बहुत ही मुश्किल है। अतः, अल्पकाल में किसी अर्थव्यवस्था में विद्यमान स्वतः नियंत्रण प्रणाली जिस सीमा तक हो या उसके अभाव में, हस्तक्षेप की एक उपयुक्त नीति तदनुसार अपनाई जानी चाहिए।

तीसरा, उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में वास्तविक क्षेत्र में लचीलापन काफी कम होता है। उदाहरण के लिए, भारत में कोई कारोबार खोलने या बंद करने में काफी समय लग जाता है। अतः, यहां के वास्तविक क्षेत्र की विनिमय दर के उतार-चढ़ाव के प्रति प्रतिक्रिया उतनी लचीली नहीं हो सकती जितनी कि विकसित अर्थव्यवस्थाओं में। इसलिए, यह जानना जरूरी है कि

वास्तविक क्षेत्र में किस हद तक लचीलापन विद्यमान है। निःसंदेह, नीति-निर्धारकों को चाहिए कि वे वास्तविक क्षेत्र को प्रोत्साहित करें जिससे उसमें अधिक से अधिक लचीलापन पैदा हो ताकि वे विनिमय दर की परिवर्तनशीलता का सामना कर सकें। वहीं, परिवर्तन लाने के लिए इतना दबाव नहीं होना चाहिए कि वनिमय दर की अत्यधिक अस्थिरता कारोबारी वातावरण को गंभीर रूप से अस्त-व्यस्त कर दे।

चौथा, उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में उत्पन्न होती परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विनिमय दर में लचीलापन और अस्थिरता के बीच भेद कर पाना कठिन है। इनके बीच अंतर, बाज़ार की तैयारी और बाज़ार के सहभागियों के आधार पर होना चाहिए। यह आवश्यक है कि अधिक से अधिक लचीलेपन की प्रत्याशाओं को प्रोत्साहित किया जाए और बढ़ते हुए लचीलेपन की सूचना बाज़ार सहभागियों को दी जाए ताकि वे अधिक लचीलेपन के प्रति समायोजन (एडजेस्टमेंट) के लिए तैयार रहें, लैस रहें और सक्षम रहें। कुछ समय बाद, कल जो अस्थिरता थी वह आने वाले कल के लिए लचीली बन जाएगी। यही वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से हम भारत में विनिमय दर के अधिक लचीलेपन की ओर धीरे-धीरे बढ़ रहे हैं।

अंतिम, पूंजी नियंत्रण के प्रभाव अथवा अन्यथा का सामान्यीकरण करना पूरी तरह उपयुक्त नहीं होगा। पूंजी खाता प्रबंधन के प्रभाव को कई कोणों से देखना होगा। उनमें से कुछ का उल्लेख मैं करना चाहूंगा। पहला - विनिमय दर प्रत्याशाओं पर प्रभाव, दूसरा - वास्तविकता के विरुद्ध अर्थात् किसी एक समय यदि पूंजी का नियंत्रण न किया जाता तो क्या स्थिति हो सकती थी? तीसरा - अल्पकालिक प्रभाव की तुलना में दीर्घकालिक प्रभाव। चौथा - चालू खाता के बहाने से पूंजी खाता लेनदेन को विफल करने के लिए संबंधित देश के चालू खाता प्रबंधन की समग्र प्रणाली। ऐसी प्रणाली जो प्रत्यावर्तन और अभ्यर्पण को नियंत्रित करती है वह भी यहां लागू होगी। पांचवां - विद्यमान कानूनी और संस्थागत ढांचे के अंतर्गत देश में प्रशासनिक ढांचा और प्रशासन का प्रभावपूर्ण होना। अंतिम, समग्र रूप से, विकास और स्थिरता दोनों की दृष्टि से, चीन और भारत दोनों ने पूंजी खाते को सक्रियता से नियंत्रित किया है और हाल के वर्षों में उनका निष्पादन काफी अच्छा रहा है।

विश्व वित्तीय प्रणाली समिति तथा अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक ने उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में पूंजी प्रवाहों का उनकी समग्र वित्तीय स्थिरता पर पड़ने वाले प्रभावों को ध्यान में रखते हुए उनके पूंजी प्रवाहों के मुद्दों के बारे में रिपोर्ट करने के लिए एक कार्यदल का गठन किया है। यह उल्लेखनीय है कि डॉ. राकेश मोहन, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक को कार्य दल का प्रमुख चुना गया है। हमें उम्मीद है कि उभरती चुनौतियों का सामना करने के लिए हमारी नीतियों को तैयार करने में दल की चर्चाओं से अवश्य लाभ होगा।

VII. समापन

अंत में, मैं यह कहना चाहूंगा कि पूंजी खाते का प्रबंधन भारत में लोक नीति का महत्वपूर्ण अंग बन गया है।

नीति-निर्धारकों ने यह माना है कि सभी स्तरों पर प्रबंधन के प्रति, अल्प अवधि और दीर्घ अवधि दोनों में चुनौतियां पैदा हो रही हैं।

जहां इस समय पूंजी के आने वाले अत्यधिक प्रवाह तथा अधिकता की वजह से होने वाली कुछ अस्थिरता पर ध्यान दिया जा रहा है, वहीं मेरा यह मानना है कि यह विवेकपूर्ण होगा कि इस संभावना को नज़र अंदाज़ न किया जाए कि भारतीय अर्थव्यवस्था में अंतर्निहित सुदृढ़ मूलभूत सिद्धांतों के बावजूद मनोदशा में अथवा विश्व

में चलनिधि की स्थिति में सहसा परिवर्तन के कारण आने वाले दिनों में कुछ परिवर्तन अवश्य होंगे। रणनीति बनाकर पूंजी खाते का प्रबंधन करने में यह वांछित है कि उसे सभी प्रकार की स्थितियों के लिए बनाया जाए, और जिस प्रकार से अप्रत्याशित घटनाएं मोड़ ले रही हैं, उनमें पूंजी खाते के प्रबंधन के सामने चुनौतियां सामान्यतः कुछ अलग प्रकार की होंगी।

रिज़र्व बैंक इसे विवेकपूर्ण मानता है कि विभिन्न परिदृश्यों तथा संभावित आकस्मिकताओं का विश्लेषण करना और उन पर निगरानी रखना जारी रखा जाए ताकि पूंजी खाते का प्रबंधन और मौद्रिक प्रबंधन, मूल्य एवं वित्तीय स्थिरता को कायम रखते हुए ऊँची विकास दर को प्रशस्त करता रहे।